

Socioeconomic Empowerment of Women through Indian Folk Art (भारतीय लोक कला के माध्यम से महिलाओं में सामाजिक आर्थिक सशक्तिकरण)

Archana Singh^{a*}, Dr. Gulabdhar^b

^a Research Student, Department of Painting, Jagadguru Rambhadracharya Divyang Rajya Vishwavidyalaya, Chitrakoot (UP)

^b Research Director, Department Incharge, Department of Painting, Jagadguru Rambhadracharya Divyang Rajya Vishwavidyalaya, Chitrakoot (UP)

^aEmail: archanajrhul@gmail.com

Abstract

Indian folk art is an effective medium for the socioeconomic empowerment of women. Arts like Madhubani, Warli, Phad, weaving, embroidery, and clay crafts have provided livelihood opportunities for women. The commercialization of these arts has made women economically independent and increased their self-esteem and social participation. Folk art not only preserves tradition and culture, but also gives women recognition and respect. In this way, folk art liberates women from dependency and leads them towards self-reliance and equality, which is considered the foundation of social change and progress.

भारतीय लोककला महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक सशक्तिकरण का प्रभावी माध्यम है। मधुबनी, वारली, फड़, बुनाई, कढ़ाई और मिट्टी शिल्प जैसी कलाओं ने महिलाओं को आजीविका के अवसर प्रदान किए हैं। इन कलाओं के बाज़ारीकरण से महिलाएँ आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनीं और उनके आत्मसम्मान व सामाजिक भागीदारी में वृद्धि हुई। लोककला न केवल परंपरा और संस्कृति को संरक्षित करती है, बल्कि महिलाओं को पहचान और सम्मान भी दिलाती है। इस प्रकार लोककला महिलाओं को आश्रितता से मुक्त कर आत्मनिर्भरता और समानता की ओर अग्रसर करती है, जो सामाजिक परिवर्तन और प्रगति का आधार माना जाता है।

Keywords: folk art, women, culture, tradition, empowerment, self-reliance, livelihood, crafts, society, tradition, self-respect, rural, identity, heritage, training, entrepreneurship, hard work, opportunity, conservation.

लोक कला, स्त्री, संस्कृति परंपरा, सशक्तिकरण, आत्मनिर्भरता, आजीविका, शिल्प, समाज, परम्परा, आत्मसम्मान, ग्रामीण, पहचान, विरासत, प्रशिक्षण, उद्यमिता, परिश्रम, अवसर, संरक्षण

Received: 08/09/2025

Published: 09/01/2025

* Corresponding author.

प्रस्तावना

संपूर्ण संसार में नारी सर्वाधिक सुंदर और आकर्षक तथा मनमोहक मानी गई है। वह प्रकृति की अनुपम कृति है,

जो विविध रूप धारण करती है। दायित्वो का निर्वाह और समर्पण उसके स्वभाव का अभिन्न अंग है क्योंकि नारी सृष्टि के प्रारंभ से ही अनंत गुणों आगार रही है। वह करुणा, ममता, क्षमा, सहनशीलता, त्याग व प्रेम तथा वात्सल्य की प्रति मूर्ति मानी जाती है।

भारतीय समाज में स्त्रियाँ सदियों से संस्कृति और परंपरा की वाहक रही हैं। उनकी भूमिका केवल घर-परिवार तक सीमित नहीं रही, बल्कि उन्होंने लोककला और शिल्प की अदृश्य परंपराओं को भी पीढ़ी-दर-पीढ़ी संरक्षित रखा। यह तथ्य निर्विवाद है कि लोककला केवल रंग, आकृति और शिल्प तक सीमित नहीं होती, बल्कि इसमें जीवन का दर्शन, समाज की संवेदना और स्त्री के संघर्ष का इतिहास भी दर्ज होता है। लोककलाओं का स्वरूप सामूहिक भी है और व्यक्तिगत भी, जिसमें स्त्रियों ने अपने जीवन के सुख-दुख, उत्सव-त्योहार और धार्मिक विश्वासों को जीवंत रूप में उकेरा है।

आज के बदलते समय में जब महिलाओं की पहचान और अधिकारों पर गहन विमर्श हो रहा है, तब यह और भी महत्वपूर्ण हो जाता है कि हम उन कलाओं की ओर लौटें, जिन्होंने ग्रामीण और आदिवासी स्त्रियों को न केवल आजीविका दी बल्कि आत्मसम्मान और आत्मविश्वास भी प्रदान किया। सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण की बहस में लोककला एक ऐसा माध्यम है जो एक ओर सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण करती है और दूसरी ओर स्त्रियों के लिए आत्मनिर्भरता का सेतु भी बनती है।

लोककलाओं का पुनरुद्धार केवल बाजार की माँग पूरी करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह ग्रामीण स्त्रियों को आर्थिक अवसर प्रदान करने, उनके श्रम को उचित मूल्य देने और उन्हें समाज की मुख्यधारा से जोड़ने की प्रक्रिया है। पारंपरिक शिल्प के माध्यम से महिलाएँ अपने परिवारों को सहयोग देती हैं, बच्चों की शिक्षा में निवेश करती हैं और समाज में अपनी पहचान स्थापित करती हैं। यही कारण है कि लोककला आज केवल 'कला' न होकर 'सशक्तिकरण' का औज़ार बन चुकी है।

भारतीय लोककला की परंपरा अत्यंत समृद्ध और विविधतापूर्ण है। यह परंपरा गाँव-गाँव, क्षेत्र-क्षेत्र में अलग-अलग रूपों में देखने को मिलती है - कहीं यह चित्रकारी है, कहीं शिल्प, कहीं कढ़ाई, कहीं मिट्टी या पत्थर पर उकेरी गई कलात्मकता। इस पूरी परंपरा में स्त्रियों की भागीदारी सबसे प्रमुख रही है।

लोककला और स्त्री का संबंध

लोक कला और स्त्री का संबंध अत्यंत गहरा और जीवंत है। भारतीय लोक परंपराओं में स्त्री केवल दर्शक नहीं, बल्कि रचनाकार और संवाहक के रूप में उपस्थित रही हैं। लोक कला के अनेक रूप—चाहे वह मधुबनी, वारली, फड़, पिथौरा, गोंड, भील चित्रकला हो या लोकगीत, लोकनृत्य और कढ़ाई-बुनाई—इन सबमें स्त्री की सृजनात्मकता और अनुभव की गहरी छाप मिलती है। घर-आँगन की दीवारों पर बनाए गए चित्र, शादी-ब्याह या पर्व-त्योहार के अवसर पर गाए गए गीत, यहाँ तक कि दैनिक जीवन में उपयोग होने वाले शिल्प, स्त्रियों की कलात्मक अभिव्यक्ति का हिस्सा हैं।

लोक कला में स्त्री केवल कलाकार नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक संदेशों की वाहक भी रही हैं। उनके बनाए चित्र और गीत जीवन के संघर्ष, प्रकृति से जुड़ाव, आध्यात्मिकता और सामाजिक मूल्यों को अभिव्यक्त करते हैं। साथ ही, लोक कला स्त्री के लिए आत्मनिर्भरता का माध्यम भी बनी है, क्योंकि यह आजीविका और आर्थिक सशक्तिकरण का साधन प्रदान करती है।

इस प्रकार, लोक कला और स्त्री का संबंध केवल परंपरा तक सीमित नहीं, बल्कि यह स्त्री की पहचान, संवेदनशीलता और रचनात्मक ऊर्जा का प्रतीक है। यह संबंध भारतीय संस्कृति की आत्मा को जीवित रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

सामाजिक सशक्तिकरण का माध्यम

सामाजिक सशक्तिकरण का अर्थ है समाज में व्यक्ति विशेषकर महिलाओं को समान अवसर, सम्मान और स्वतंत्रता प्रदान करना। यह केवल अधिकारों की बात नहीं करता, बल्कि उस मानसिकता को भी बदलने की कोशिश करता है जो वर्षों से महिलाओं को द्वितीयक स्थान पर रखती आई है। जब महिलाएँ लोककला और पारंपरिक शिल्प के माध्यम से समाज में अपनी पहचान बनाती हैं, तो यह सामाजिक सशक्तिकरण का सशक्त उदाहरण बनता है।

लोककला के जरिए महिलाएँ न केवल अपनी रचनात्मकता को अभिव्यक्त करती हैं, बल्कि सामाजिक मंचों पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराती हैं। उनकी कला जब प्रदर्शनियों, मेलों और डिजिटल प्लेटफॉर्म पर प्रदर्शित होती है, तो समाज उन्हें केवल “गृहिणी” नहीं, बल्कि “सृजनकर्ता” और “आर्थिक योगदानकर्ता” के रूप में पहचानने लगता है। यह परिवर्तन सामाजिक सोच में गहरी छाप छोड़ता है।

सामाजिक सशक्तिकरण का सबसे बड़ा लाभ यह है कि महिलाएँ आत्मविश्वास से अपनी बात रख पाती हैं, लैंगिक भेदभाव को चुनौती देती हैं और सामुदायिक निर्णयों में सक्रिय भूमिका निभाती हैं। इससे न केवल उनकी व्यक्तिगत स्थिति सुधरती है, बल्कि पूरा समाज प्रगतिशील बनता है। इस प्रकार, लोककला जैसी परंपराएँ महिलाओं को सम्मान, पहचान और समानता दिलाकर सामाजिक सशक्तिकरण का सशक्त माध्यम बनती हैं।

लोककलाओं के माध्यम से स्त्रियाँ अपने समुदाय में सम्मान अर्जित करती हैं। जब उनकी कृतियाँ मेले, प्रदर्शनियों या डिजिटल मंचों पर प्रदर्शित होती हैं, तो उन्हें यह अनुभव होता है कि उनकी प्रतिभा समाज में मान्यता पा रही है। यह आत्मविश्वास उन्हें पितृसत्तात्मक संरचनाओं से टकराने और अपने अधिकारों की माँग करने का साहस देता है।

आर्थिक आत्मनिर्भरता

आर्थिक निर्भरता का अर्थ है किसी व्यक्ति का अपनी आजीविका और आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दूसरों पर आश्रित होना। समाज में विशेषकर महिलाएँ लंबे समय तक आर्थिक रूप से परिवार के पुरुष सदस्यों पर निर्भर रही हैं। यह निर्भरता उन्हें आत्मनिर्णय और स्वतंत्र जीवन जीने से रोकती है। जब व्यक्ति अपने आर्थिक निर्णय खुद नहीं ले पाता, तो उसकी स्वतंत्रता और आत्मसम्मान दोनों प्रभावित होते हैं।

आर्थिक निर्भरता केवल व्यक्तिगत स्तर पर ही नहीं, बल्कि सामाजिक स्तर पर भी असमानताओं को जन्म देती है। उदाहरण के लिए, जब महिलाएँ आर्थिक रूप से निर्भर रहती हैं, तो उनके विचार, निर्णय और अधिकार अक्सर दबा दिए जाते हैं। वे शिक्षा, स्वास्थ्य और सामाजिक गतिविधियों में पीछे रह जाती हैं।

लेकिन जैसे ही महिलाएँ स्वरोजगार, लोककला, छोटे उद्योग या अन्य कार्यक्षेत्रों में सक्रिय होकर आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनती हैं, तो उनकी स्थिति बदलने लगती है। आत्मनिर्भरता उन्हें न केवल अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता देती है, बल्कि समाज में उनका सम्मान और सहभागिता भी बढ़ाती है।

इसलिए, आर्थिक निर्भरता को समाप्त कर आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए अनिवार्य है। जब प्रत्येक व्यक्ति, विशेषकर महिलाएँ, आत्मनिर्भर बनेंगी, तभी समाज में वास्तविक समानता और प्रगति संभव हो सकेगी।

लोककला और शिल्प केवल सांस्कृतिक अभिव्यक्ति ही नहीं, बल्कि आय का स्रोत भी है। बिहार की मधुबनी चित्रकला, गुजरात की पोटोला बुनाई, राजस्थान की ब्लॉक प्रिंटिंग और कच्छ की कढ़ाई - इन सबने स्त्रियों को रोजगार के अवसर दिए हैं।

उदाहरणस्वरूप, मधुबनी की शांति देवी ने अपनी कला को अंतरराष्ट्रीय मंच पर पहुँचाकर न केवल अपने परिवार को संभल दिया, बल्कि अनेक अन्य महिलाओं को भी प्रेरित किया।

संस्थागत सहयोग

गैर-सरकारी संगठन (जैसे सेवा, दस्तकार, रंगसूत्र) और सरकारी योजनाएँ इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। ये संगठन प्रशिक्षण, वित्तीय सहयोग और विपणन की सुविधा प्रदान करते हैं। स्वयं सहायता समूह (SHG) भी ग्रामीण महिलाओं को उद्यमिता की दिशा में प्रोत्साहित कर रहे हैं। इनके माध्यम से महिलाएँ सामूहिक रूप से उत्पाद तैयार करती हैं और उन्हें घरेलू तथा वैश्विक बाजार तक पहुँचाती हैं।

डिजिटल युग और नए अवसर

आज के समय में डिजिटल प्लेटफॉर्म और ई-कॉमर्स ने लोककलाओं को वैश्विक पहचान दी है। ग्रामीण महिलाएँ अब अपनी कलाकृतियाँ सीधे ग्राहकों को बेच सकती हैं, जिससे बिचौलियों की भूमिका कम होती है और उन्हें उचित मूल्य मिलता है। यह तकनीकी क्रांति महिलाओं के लिए अवसरों के नए द्वार खोल रही है।

चुनौतियाँ

फिर भी, महिलाओं के सामने अनेक चुनौतियाँ बनी हुई हैं। सामाजिक बंधन, शिक्षा का अभाव, पूँजी की कमी और विपणन के अवसरों की कमी उनके रास्ते की बड़ी बाधाएँ हैं। कई बार उनकी कला को उचित मूल्य नहीं मिलता और पुरुष प्रधान समाज में उन्हें पीछे धकेलने का प्रयास होता है।

सफलताओं के उदाहरण

राजस्थान की गुलाबो, जो एक गृहिणी थीं, आज अपना ब्लॉक प्रिंटिंग व्यवसाय चला रही हैं। हरियाणा की मनप्रीत कौर फुलकारी कला से आत्मनिर्भर बनी हैं। गुजरात की कच्छी महिलाएँ कढ़ाई और पिपली के काम से अपने परिवार की आर्थिक रीढ़ बन चुकी हैं। ये उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि अवसर मिलने पर स्त्रियाँ अपनी कला से चमत्कार कर सकती हैं।

निष्कर्ष

भारतीय लोककला केवल सांस्कृतिक धरोहर नहीं है, बल्कि यह महिलाओं के लिए सामाजिक और आर्थिक मुक्ति का साधन भी है। यह उन्हें अपनी पहचान बनाने, आत्मनिर्भर बनने और समाज में सम्मान अर्जित करने का अवसर देती है।

आज की आवश्यकता है कि हम इन कलाओं को केवल परंपरा के रूप में न देखें, बल्कि उन्हें सशक्तिकरण की प्रक्रिया के रूप में स्वीकार करें। सरकार, गैर-सरकारी संगठन, उद्योग और समाज - सभी को मिलकर ऐसा वातावरण

बनाना होगा जहाँ स्त्रियों को उनकी कला का उचित मूल्य मिले। यह केवल आर्थिक सुधार का सवाल नहीं है, बल्कि यह नैतिकता और न्याय का प्रश्न भी है।

स्त्रियाँ जब आत्मनिर्भर होती हैं तो केवल अपने परिवार की स्थिति सुधारती हैं, बल्कि आने वाली पीढ़ियों को शिक्षा और अवसरों से जोड़ती हैं। उनकी कलाकृतियाँ केवल वस्त्र या चित्र नहीं होतीं, बल्कि उनमें उनके संघर्ष, सपने और आकांक्षाएँ भी छिपी होती हैं।

लोककला हमें यह सिखाती है कि सशक्तिकरण केवल नीतियों से नहीं आता, बल्कि परंपराओं से भी उपज सकता है। अगर हम इन कलाओं को प्रोत्साहित करें और ग्रामीण स्त्रियों को वैश्विक मंच दें, तो वे न केवल अपने लिए बल्कि पूरे समाज के लिए नई संभावनाओं के द्वार खोल सकती हैं।

इस प्रकार, लोककला और शिल्प महिलाओं के लिए स्वतंत्रता, सम्मान और आत्मविश्वास का मार्ग है। यह हमारी संस्कृति का गौरव है और हमारे समाज का भविष्य भी। हमें इसे संजोकर, सहेजकर और आगे बढ़ाकर ही स्त्री सशक्तिकरण का वास्तविक सपना पूरा करना होगा।

संदर्भ सूची

1. अर्चना रानी, “भारतीय समकालीन महिला कलाकारों की कला में प्रयोगशीलता के स्वर”, आपणी माटी, जनवरी 2025, पृ. 3-71
2. न्यूजक्लिक, “भारतीय कला के उन्नयन में महिलाओं का योगदान”, मार्च 2020, पृ. 2-41
3. Social Research Foundation, “भारत में लोक कला की देन महिलाओं को जाती है”, हिंदी सेट पेपर, पृ. 5-91
4. Maria Popova, “शहर से प्रेरणा: उत्कृष्ट भारतीय लोक कला का महिला सशक्तिकरण से मिलन”, द मार्जिनलियन, n.p.l
5. Kaav Publications, “भारतीय संस्कृति और नारी सशक्तिकरण (एब्सट्रैक्ट)”, शोध पत्र, पृ. 1-31
6. “भारत में महिला सशक्तिकरण एवं योजनाएं : एक अध्ययन”, IJSRST शोध पत्र, पृ. 10-141
7. पंडित सुन्दर लाल शर्मा विश्वविद्यालय, “समाज में महिलाओं के अधिकार, सशक्तिकरण एवं चुनौतियाँ”, लघु शोध परियोजना, पृ. 23-271
8. International Journal of Reviews and Research in Social Sciences, “महिला सशक्तिकरण की वर्तमान स्थिति”, जून 2019, पृ. 14-191
9. Deepanjali Dayal, “महिला सशक्तिकरण पर डिजिटल सामाजिक टिप्पणीकार के रूप में कलाकार”, Granthaalayah Arts Journal, n.p.l
10. Rajesh Kumar, “भारत में महिला सशक्तिकरण पर एक अध्ययन”, ResearchGate (PDF), पृ. 31-371